इस अंक में....

साहित्यिक विमर्श/ Literature Discourse

कविता [9-15]

आकांक्षा मिश्रा, अंजू जिंदल, ज्योत्सना जोशी, गुलाम गौश अंसारी, जयति जैन, नीरज द्विवेदी, गजेन्द्र पाटीदार

ग़ज़ल [16]

- अमरेश गौतम 'अयुज'

कहानी [17-24]

- अधूरी कसमें: मालती मिश्रा

लघुकथा [25-27]

- आशियानां: विश्वम्भर पाण्डेय 'व्यग्र'
- औरंगजेब: मृणाल आशुतोष
- जहरीली गालियाँ: प्रदीप कुमार

पुस्तक समीक्षा [28-33]

- आत्माएँ बोल सकती हैं [लेखक- डॉ. ललित सिंह] समीक्षक: डेल्सी एलिजाबेथ
- कंदील (उपन्यास: राजकुमार राकेश) समीक्षक- अंकित
- शंख घोष की चयनित कविताएँ (शंख घोष) समीक्षक- जयश्री पुरवार

व्यंग्य [34-36]

- बेइज़्ज़ती सर्वत्र अर्जयेत: अमित शर्मा
- इलेक्ट्रानिक के महान किरदार: संजय वर्मा 'दृष्टि'

यात्रा वृत्तांत [37-41]

- नेपाल यात्रा: गौरव कुमार

क्षणिका [42]

- क्षणिकाएं: डॉ. जियाउर रहमान जाफरी

साहित्यिक लेख [43-45]

- सूर्यबाला जी की व्यंग्य रचना 'जूते चिढ़ गए हैं'- डॉ संगीता गांधी

रोशनदान [46-49]

- आम नहीं है ....आम की यह बरसात: डॉ निशा शर्मा

मीडिया- विमर्श/ Media Discourse

- सोशल मीडिया और छात्र आंदोलन; एक अध्ययन- मनीष कुमार जैसल [शोध आलेख] [50-55]
- स्वतंत्रतापूर्व पत्रकारिता में राष्ट्रवाद के विविध स्वर: डॉ. नवाब सिंह [शोध आलेख] [56-72]
- Comparative analysis between Hindi and English print media representation of Bhopal gas tragedy: Armendra Amar [Research Article] [73-91]
- सोशल मीडिया और छात्र आंदोलन; एक अध्ययन: मनीष कुमार जैसल [शोध आलेख] [92-102]

कला- विमर्श/ Art Discourse

- हिंदी सिनेमा और सामाजिक सद्भाव: शालिनी सिंह [शोध आलेख] [103-106]
- गोंड संस्कृति में प्राचीन ओजा हस्त कला का योगदान (तेलंगागा राज्य के आदिलाबाद जिले के संदर्भ में): चोले नंद कुमार [आलेख] [107-111]
- साहित्य से सिनेमा माध्यम में रूपांतरण की चुनौतियाँ: ज्ञान चंद्र पाल [शोध आलेख] [112-119]

दलित एवं आदिवासी- विमर्श/ Dalit and Tribal Discourse

- हिंदी साहित्य और संवेदना के विकास में हिंदी दलित लेखन की भूमिका: विकास कुमार [शोध आलेख] [120-125]
- नयी सदी की हिंदी कहानियों में आदिवासी जीवन यथार्थ: डॉ. नवीन नन्दवाना [शोध आलेख] [126-133]
- दलित चेतना के विकास में अम्बेडकर की भूमिका: अरविन्द प्रसाद गोंड [शोध आलेख] [134-137]
- आदिवासी समाज : विकास, विस्थापन और अस्तित्व- आनन्द कुमार पटेल [शोध आलेख] [138-145]
- हाशिये की वैचारिकी : भोगा हुआ यथार्थ: डॉ.धीरेन्द्र सिंह [शोध आलेख] [146-151]

इस तरह दलित और पिछड़ों में भी अंतर्विरोध है, जिसको फणीश्वर नाथ रेणु ने के उपन्यास मैला आँचल में देखा जा सकता है, 'जहां यादव समाज राजनैतिक लाभ के लिए दलितों से मिलता तो है, लेकिन जैसे ही बात भूमि सुधार को लेकर होती है तो वे सवर्ण समुदाय के साथ मिलकर दलितों के ख़िलाफ हो जाते हैं।' लेकिन अब सही मायने यह एकता ये समाज महसूस करने लगे हैं; इसके तथ्य के सत्यापन के लिए कवि लीलाधर मंडलोई के काव्य को देखा जा सकता, जिसके कारण ही डॉ. वी.जी.गोपालकृष्णन इनकी कविता को 'वामपन्थी विकल्प की तलाश' कहा है। उनको मालूम है कि एकता में शक्ति होती है इसलिए वे विभिन्न खेमों में खण्डित लड़ाई लड़ने के स्थान पर एकजुट संघर्ष को महत्व दोते हैं –

इसलिए जोड़ना चाहते हैं कुछ और रंग/
मसलन हरा और सफेद/
ज़रूरी हो तो थोड़ा नीला भी कि/
एकजुट हो मजूर-किसान और दलित-स्त्री।''[24]

विकासकुमार
शोध छात्र
इ . वि .वि . इलाहबाद, पता- रूम न . 119
अमरनाथ झा हॉस्टल, इलाहबाद पिन कोड - 211002

[24] मंडलोई लीलाधर, *काल बाँका तिरछा* (पाठकों के बीच कविता से), नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2004, पृ. 71

नई सदी की हिंदी कहानियों में आदिवासी जीवन यथार्थ

- डॉ. नवीन नन्दवाना
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
(राजस्थान) 313001

''जब हम सभ्यताओं और संस्कृतियों की बात करते हैं तो बिना कहानियों के उनकी कल्पना नहीं कर सकते, क्योंकि कहानियाँ मूलतः हमारी सामूहिक सांस्कृतिक स्मृति की अभिव्यक्ति हैं। दुनियाभर की महान सभ्यताओं से अगर उनकी कहानियाँ हटा ली जाए तो सारी सभ्यताएँ भरभराकर कच्ची मिट्टी की तरह गिर पड़ेंगीप सभ्यताओं के अस्तित्व और उनकी संरचना की पहचान का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत भी कहानियाँ ही हैं। कहानियों के बिना बड़ी से बड़ी मानव सभ्यता की इतिहास के आरंभ को नहीं जाना जा सकताप यहाँ तक की संसार के सारे आदि ग्रंथों की संरचना भी कहानियों पर ही टिकी है।''1 इस कथन से हम यह जान सकते हैं कि मानव सभ्यता के इतिहास व उसकी संघर्ष गाथा के माध्यम से वर्तमान तक की यात्रा को समझने-समझाने में कहानियाँ अपनी अहम भूमिका अदा कर दी है।

सृष्टि की संकल्पना उस स्रष्टा ने विशेष प्रकार से की है। उसने प्रत्येक पशु-प्राणी और मानव के लिए जीवनयापन के बेहतरीन साधन उपलब्ध कराए हैं। किंतु समय के साथ-साथ हुई विकास प्रक्रिया ने उस परमपिता द्वारा निर्मित सृष्टि में बहुत बदलाव ला दिए। विकास की गति के साथ-साथ मानव में धीरे-धीरे स्वार्थ वृति उभरीप समाज का एक वर्ग धीरे-धीरे प्रकृति प्रदत उपहारों पर अपना अधिकार जमाने लगा और वन तथा गिरीकुहरों में रहने वाला मानव जो उस प्रकृति व पर्यावरण का रखवाला था, उस तथाकथित सभ्य कहे जाने वाले मानव की स्वार्थवृत्ति का शिकार हुआ.

''आजादी के इतने वर्षों बाद भी जब हम सच्चे दिल से अपने देश का दर्शन करने का प्रयास करते हैं तो हमें दो तरह का देश दिखाई पड़ता है- एक इंडिया और दूसरा भारतप इंडिया की तस्वीर बड़ी शाइनिंग है जहाँ बड़े-बड़े शहर, ऊँची-ऊँची इमारतें हैं, अपार धन-संपदा, बड़े-बड़े शॉपिंग मॉल तथा उद्योगपतियों की दुनिया है वहीं दूसरी ओर वनांचल में बसने वाले भारत की तस्वीर आज भी बहुत कुछ नहीं बदलीप आज भी उस भारत का आम आदमी शाइनिंग इंडिया की ओर दूर से खड़ा रह कर देखता हुआ सोच रहा है कि आखिर में यह दूसरा देश कौन सा है ?''2 यह आम आदमी आजादी के 70 वर्षों बाद भी मुख्यधारा से कोसों दूर है। इस आम आदमी में आदिवासी समाज भी शामिल है जो 70 वर्षों के प्रौढ़ आजाद देश में भी, कभी विकास के नाम पर तो कभी विकास परियोजनाओं के नाम पर ठगा जाता रहा है।

''भारतीय समाज की वर्ग निर्धारण प्रक्रिया में कृषि कार्यों, पशुपालन और वनोपजों पर आधारित जीवन यापन करने वाले समुदायों में आदिवासी प्रमुख हैं। विराट आदिम सभ्यता के विकास से दीर्घकाल तक इस समाज की आर्थिक व्यवस्थाएँ कृषि एवं पशुपालन तथा वनोपज पर आधारित ही रही है लेकिन यांत्रिकता की दौड़ और भौतिकता की होड़ ने आदिवासी समाज की परंपरागत अर्थव्यवस्था के ढाँचे को चकनाचूर कर दियाप ग्लोबलाइजेशन और विदेशी पूँजी निवेश की नीति ने उसे भूमिहीन किया तो वन अधिनियम, वनोपज निषेध कानून, खनन उद्योग नीति आदि ने वनों से

बेदखल कर उस प्रदेश के मूल निवासी को मजदूर बनने पर विवश किया।''3 वास्तव में आदिवासी जीवन संघर्षों का जीवन है। वह धीरे-धीरे श्रमिक बना और वैश्वीकरण ने उसकी जीवन को बहुत प्रभावित किया। वह कभी भुखमरी का शिकार हुआ तो कभी विस्थापन काप कभी उसने बीमारियों का दंश झेला तो कभी अवैध खनन व अंधाधुंध खनिज दोहन की नीति के चलती मारा गया. सरकारी कल्याण योजनाओं की पहुँच भी उन तक उतनी नहीं हो पाई जितनी की होनी चाहिए थी।

विगत दो-तीन दशकों से वह दिशाहारा आदिवासी जन रचनाकार की कलम का विषय बनाप रचनाकार ने कभी कविता तो कभी कहानी-उपन्यास और आलोचना के जरिए उसके घाव पर मरहम लगाने का प्रयास किया। जीवन की अल्प जरूरतों में जीता वह आदिवासी चर्चा और विमर्श का केंद्र बना तथा धीरे धीरे उसके दुख-दर्द की गाथा राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों का विषय बनी।

समकालीन हिंदी कथा साहित्य में आदिवासी जीवन संघर्ष प्रमुखता से वर्णित हुआ है। कहानीकारों ने आदिवासी जीवन के विविध पहलुओं को अपनी कहानी का विषय बनायाप एलिस एक्का, रामदयाल मुंडा, वाल्टर भेंगरा 'तरुण', पयारा केरकेट्टा, रोज केरकेट्टा, पीटर पाल एक्का, संजीव, हरिराम मीणा और रणेंद्र आदि रचनाकारों की कहानियाँ आदिवासी जीवन संघर्ष और अस्मिता की सही-सही पड़ताल करती है।

वाल्टर भेंगरा 'तरुण' हिंदी में लिखने वाले आदिवासी कथाकार हैं। पत्रकारिता, दूरदर्शन से जुड़े इस रचनाकार की कहानी 'संगी' आदिवासी जीवन संघर्ष को सहज रुप से अभिव्यक्ति देती है। यह कहानी एक आदिवासी सैनिक 'लांस नायक फागू मुंडा' और 'दुलारी हेम्बरोम' के माध्यम से झारखंड के आदिवासी जीवन की व्यथा-गाथा को वाणी प्रदान करती है। झारखंड को इस बात की खुशी है कि झारखंड से रोजगार की तलाश में बाहर गए आदिवासी ने अपनी संस्कृति को बरकरार रखा किंतु झारखंड क्षेत्र में ही वहाँ की संस्कृति क्षरण की ओर बढ़ रही है। विस्थापन व पलायन झारखंड की एक बड़ी समस्या है। कहानीकार लिखता है कि- ''किंतु अब...... अब ऐसी बात यहाँ झारखंड में ही नहीं रहीप आज बड़े-बड़े कारखानों और बड़ी-बड़ी योजनाओं के नाम पर यहाँ के आदिवासी उखड़ने और बिखरने लगे हैं। ठेकेदारों के दलाल इस रास्ते पर उनकी मदद कर रहे हैं।'' 4

आदिवासियों को मोटी मजदूरी रकम, खाना-पीना व दवा-दारु का सपना दिखा कर बड़े शहरों में मजदूरी के लिए भेजा जाता है। भोला-भाला आदिवासी सुखी जीवन के हसीन सपने संजोए पलायन कर जाता है किंतु शहरों में उसका शोषण होता है और वह कभी भी शोषण तंत्र से मुक्त नहीं हो पाताप कहानी हमारे सम्मुख कई प्रश्न छोड़ती है। ''मामू की जवान बेटी और उसी गाँव की दो अन्य जवान लड़कियाँ इसी तरह दो साल पहले मजदूरी करने के लिए आस-पड़ोस के गाँव वालों के साथ निकली थीं, बाकी सभी लौट आए, लेकिन उन तीनों का आज तक कुछ पता न चल सकाप इतना बोलते-बोलते दुलारी का स्वर गीला हो गयाप''5 यहाँ कहानीकार जो कहना चाहता है, उसका मंतव्य हम किसी से भी छिपा नहीं है।

शोषण की यही दास्तान मंगल सिंह मुंडा की कहानी 'धोखा' भी वर्णित करती है। मुंगली नामक पात्र की व्यथा कथा वर्णित करते हुए रचनाकार उन आदिवासी बालाओं की व्यथा-कथा उजागर करता है जो कि

पूँजीपति वर्ग द्वारा शोषण की शिकार बनाई जा रही है। मजदूरी के खातिर हो रहा पलायन भी यहाँ द्रष्टव्य है। झारखंड का आदिवासी हाड़-तोड़ मेहनत करता है किंतु मालिक फिर भी उसे अपने शोषण की चक्की में पीसता है। ''देखिए ना, सब मालिक झारखंडी का ही डिमांड करते हैं। सच मानिए पश्चिम बंगाल में इन लोगों का बहुत डिमांड है। कोलकाता से दीघा और फिर हल्दिया से बिहार के मोकामा तक इतनी विशाल प्रदेश में ईंट कौन बनाता है, मालूम है ? ये झारखंड के ही गरीब आदिवासीप ईश्वर ने इन्हें बड़ी सूझबूझ से बनाया है। जो कहो, 'हाँ' ही में उत्तर देंगेप 'न' कहना तो ये जानते ही नहींप ईमानदारी की तो ये सजीव मूर्ति हैं। यही सब कारण है इनके डिमांड काप जिस ठेकेदार के हाथ लगे कि वह चाँदी काटने लगता है, क्योंकि बीस का हिसाब लगाओ और पंद्रह का भुगतान कर दोप पाँच अपनी जेब में भर लोप''6 मुंगली ठेकेदार के शोषण का शिकार होती है। अपना सब कुछ अर्पण कर देने के बाद भी जब वर्षा काल में काम के अभाव में घर लौटती है तो उसके पास किराए के पैसे तक नहीं होतेप शोषण की यह कथा केवल मुंगली की ही नहीं समस्त आदिवासी स्त्रियों की है।

'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी के माध्यम से संजीव औरांव जाति की महिलाओं और उनकी रानी सिनगी दई की वीरता व त्याग को बतलाते हुए उस जाति की औरतों के माध्यम से अपने समय के यथार्थ को दर्शाते हुए चेतना जागृति का कार्य करते हैं। कहानी का पात्र महमूद कहानी सुनाते हुए कहता है कि- ''ओरांव औरतें अपने मुखड़े पर तीन गोदने गुदवाती हैं। रानी सिनगी दई ने महज औरतों की खोज लेकर हमलावरों को मुँह की खिलाई थी। सरहुल का पर्व था, मर्द सारे के सारे हंडिया पीकर मुर्दा बने हुए थेप एक तरह से आज जातियों पर साम्राज्यवादियों का हमला था, जिसे उन मर्दानी औरतों ने नाकाम कर दिया था एक बार, दो बार नहीं, तीन-तीन बारप इसी की याद में बारह वर्ष में ओरांव औरतों का पर्व मनाया जाता है- जनी शिकारप बारह वर्ष में एक नई पीढ़ी तैयार हो जाती है नप''7 यहाँ रानी सिनगी दई की वीरता को याद करके आज रेल यात्रा में कारुणिक हो रही व शोषण का शिकार हो रही आदिवासी ओरांव स्त्री में चेतना जगाने का कार्य किया है।

रचनाकार ने स्पष्ट रूप से बता दिया कि आदिवासी समाज व तथाकथित सभ्य समाज में आज कितना अंतर आ गया है। समय के साथ हम कितने सयाने हो गए और आदिवासी की सहजता व सज्जनता का किस प्रकार गलत लाभ उठाने लगे हैं। आदिवासी स्त्री रेल में टिकट लेकर यात्रा कर रही है फिर भी महिला टीटी उससे बहाने बनाकर व विभिन्न आरोप लगाकर सब्जियों के बाहर का भार का दस रुपाया अनावश्यक हजम कर जाती है। ''लेकिन ये तो सिरफ 20 किलो है, मिलबे नंय किया और हमरा पास भी बस दस्से बचल है फेन दस्स तो मुनाफा भी नय होगा मेम साहेबप वह एक पर एक सफाई देती गई मगर महिला टीटी साहिबा न पसीजीप बोली वह सब हम नहीं जानते निकाल कर रखो दस नहीं तो उतर जाओप''8 किंतु वह महिला टीटी उसकी एक नहीं सुनतीप वहीं पढ़ी-लिखी सभ्य दिखने वाली तीन महिलाएँ रेल में उन्हीं के साथ वाली सीट पर बैठी बिना टिकट यात्रा कर रही होती हैं और वही महिला टीटी उनका टिकट न बनाकर कुछ पैसे लेकर उनको छोड़ देती है। उनसे उसे कोई गुरेज नहीं होता जबकि वह सीधी सादी आदिवासी स्त्री जो उपयुक्त टिकट लेकर यात्रा कर रही होती है, उससे थोड़ी सब्जियाँ ले जाने के किराए के नाम पर भी दस रुपये ऐंठ लेती है। जब पास में बैठी

तथाकथित सभ्य महिलाएँ जब उस आदिवासी स्त्री को बाजारु कह देती है, तो वह स्त्री रो पड़ती है। वह अपनी पीड़ा कुछ इस प्रकार बताती है- ''रो रहा है हम अपन नसीब पेप आज हमरा साथ कोई मरद होता, पैसा होता, रोब होता तो पाँच-दस थमा के हम हू इज्जतदार बनल रहताप ऐसे का है इज्जत है हमरा ? हम बाजारु हैं।''9 रचनाकार इस कहानी में उस आदिवासी स्त्री को दुनिया की सबसे हसीन औरत बताता है और यह सब कुछ उसके रंग रूप, नाक-नक्श के कारण नहीं बल्कि उसके स्वाभिमान, आत्मविश्वास, जिजीविषा, कृतज्ञता, स्नेह और सोहार्द आदि गुणों के कारण.

हरिराम मीणा की कहानी 'सांवड़या' भी आदिवासी किसान की संघर्ष गाथा है। हरिराम मीणा ने 'सांवड़या' के चरित्र के माध्यम से यह दर्शा दिया की कठिनाइयाँ किस प्रकार व्यक्ति को फौलाद बना देती है। 'सांवड़या' खेती में हार तोड़ मेहनत करता है, वह जानता है कि यही खेती अंतिम सत्य है। वह अपने जमाने का मस्त पहलवान था जिसने कई नामी पहलवानों के छक्के छुड़ा दिए। वह इतना दृढ़ संकल्पी था कि किसी ने कह दिया कि यदि जल्दी है तो अपना कुआँ खुदवा दोप इस बात पर वह स्वयं अपने बेटों के साथ मिलकर कुआँ खोद देता है। ''जैसी भी भौतिक ही परिस्थितियाँ है उसमें जीवन को कैसे जिया जाए ? इस प्रकार का उत्तर उसने अपने अनुभव से खोज लिया थाप उसके बाप-दादा कोई जायदाद छोड़कर नहीं गए थेप दो बीघा का खेत भी उसने बंजर जमीन के झाड़-झंखाड़ को साफ कर तैयार किया थाप जीवन भर अपनी मेहनत पर उसने भरोसा किया। उसके पसीने से निर्माण की खुशबू आती थी।''10 यह केवल 'सांवड़या' की ही नहीं संपूर्ण आदिवासी जीवन की संघर्ष गाथा है।

आदिवासी जीवन संघर्ष को साहित्य की विविध विधाओं में उकेरने का कार्य महिला रचनाकारों ने भी साधिकार किया है। एलिस एक्का, रोज केरकेट्टा, वंदना टेटे आदि ऐसे नाम हैं, जिन्होंने कथा साहित्य में आदिवासी व्यथा-कथा, जीवन संघर्ष व संस्कृति को वर्णित किया है।

एलिस एक्का को भारत की पहली आदिवासी स्त्री कथाकार कहा जाता है। 'वन कन्या', 'दुर्गी के बच्चे', 'सलगी जुगनी और अंबागाछ', 'कोयल की लाडली झुमरी' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ है। अपनी कहानी 'वन कन्या' के माध्यम से ऐलिस एक्का आदिवासी संस्कृति व मानव प्रेमभाव को अभिव्यक्ति देती है। फेचो, बूटो और लुंदरी नामक पात्रों के माध्यम से एलिस एक्का आदिवासी लोकजीवन और उनकी संघर्षगाथा को अभिव्यक्ति देने के साथ-साथ इस बात को भी उजागर करती है कि आदिवासी सहज जीवन जीते हैं। छल-कपट से कोसों दूर रहते हुए वे अनजान व्यक्ति की मदद के लिए भी सदैव तैयार रहते हैं। किसी शहरी वन साहित्य प्रेमी को जब वे नदी किनारे बेहोश पड़ा देखती हैं तो फिर तो उसकी मदद के लिए तैयार हो जाती हैं। इतना ही नहीं उस आदिवासी क्षेत्र में उस शहरी युवक के साथ हुए घटनाक्रम पर अफसोस भी व्यक्त करती हैं। फेचो द्वारा की गई उस युवक की देखभाल से उस व्यक्ति का हृदय द्रवित हो जाता है और वह बोल पड़ता है- ''तुम्हारी सेवा को मैं कभी भूल न सकूँगा फेचोप तुमने मेरे हृदय को भी जीत लिया है। आदिवासी इतने सहृदय और नेक होते हैं, यह मुझे मालूम नहीं थाप... फेचो मेरे पास कुछ भी नहीं है। देखती हो, इस चेन में कड़ियाँ किस तरह जुड़ी हुई हैं। इन्हीं कड़ियों की तरह हमारा हृदय पवित्र स्नेह से जुड़ा रहेगाप तुम मेरे लिए स्नेह की पहली

कड़ी हो फेचोप जब-जब मैं वन साहित्य लिखूँगा तुम्हें ही आगे रख कर लिखूँगा.'' 11

रोज केरकेट्टा की कहानियाँ आदिवासी जीवन व संघर्ष को वाणी प्रदान करते हुए आदिवासियों में आ रही चेतना को अभिव्यक्ति देती है। रोज की कहानी 'रामोणी' इस चेतना का संचरण करती कहानी है। 'रामोणी' कहानी की नायिका है जो आसाम, बंगाल और दिल्ली में अलग-अलग स्थानों पर रह चुकी है। वहाँ का जीवन देखकर उसे लगता है कि लंभाडुमैर में आने वाले बाहरी व्यापारी वहाँ के भोले-भाले आदिवासियों को लूटते हैं। उनके श्रम से पैदा हुए सब्जियों व फलों को औने-पौने दाम में खरीदकर शहर ले जाते हैं और मनमाना पैसा वसूलते हैं। 'रामोणी' सोचती है- ''मेरे पूर्वजों ने कभी किसी विपत्ति में पड़ कर इस देश को छोड़ा थाप वे चाय बागानों में जीविका के लिए आश्रित हुएप परंतु मिट्टी की सौंधी गंध वनों-पर्वतों की हरियाली से कभी मुक्त नहीं हो सकेप चाय बागानों से मुक्त होकर उन्होंने किसानी को फिर अपनायाप हमारा धर्म जो देश में था, वही प्रवास में रहाप वह आज भी है। किसी के पेट में दो कोर अन्न पहुँचाना और सूखे कंठ को तर करना ही हमारा धर्म रहाप चाय बागानों से बाहर आकर हमारे लोगों ने अन्नानास की खेती कीप कंपनियाँ उसका जूस कहाँ नहीं पहुँचा रही है।''12 यह कथन किसान की दशा को दशाने के साथ-साथ बहुराष्ट्रीय कंपनियों की लाभकारी सौदों की ओर भी संकेत करता है।

रोज केरकेट्टा की कहानियाँ आदिवासी जीवन से जुड़े विविध विषयों को उठाती है। रोज केरकेट्टा की कहानी 'आँचल का टुकड़ा' भी आदिवासी जीवन व उनकी लोक संस्कृति को वर्णित करती है। पहाड़ी जीवन, अभावों में भी खेल व उत्सवप्रियता, प्रेम की उठती बहती तरंगों की महक इस कहानी में महसूस कर सकते हैं। 'बिरुवार गमछा' नामक कहानी आदिवासी जीवन की पहचान और परंपरा से जोड़ती है तो 'फिक्स डिपाजिट' कहानी औद्योगिकीकरण के कारण उत्पन्न समस्याओं की पड़ताल करती है। 'जिद' कहानी में बदलाव की जिद दिखाई पड़ती है।

आदिवासी स्त्री लेखन किसी भी प्रकार से पुरुष रचनाकारों से कमतर नहीं है। ''आदिवासी स्त्री लेखकों की रचनाएँ न सिर्फ भारतीय समाज की अदेखे बहुभाषायी और बहु सांस्कृतिक संसार को दर्ज करती है बल्कि पूर्वाग्रहों और गैरबराबरी से मुक्त एक स्वस्थ लोकतांत्रिक समाज की पुनर्रचना के लिए उत्प्रेरित भी करती हैं। यह इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि आदिवासी स्त्री लेखन न तो नारीवाद के प्रभाव से उपजा है और न ही दलितवाद की तरह किसी एक खास सामाजिक वर्ग से मुक्ति चाहता है। आदिवासियों का सच एक अलग सांस्कृतिक विश्व है जहाँ आदिवासी स्त्रियाँ अपनी विशिष्ट स्त्रीगत समस्याओं पर अपनी बात करते हुए भी गैर आदिवासी स्त्री लेखन की तरह 'देह' की मुक्ति या पुरुष सत्ता के सवालों को नहीं उठाती, बल्कि अपनी सामूहिक आदिवासी चेतना के कारण वे सीधे-सीधे उस विश्व से टकराती हैं जो श्रम और सृष्टि की अवमानना करता है।'' 13

आदिवासी जीवन को केंद्र में रखकर लिखने वाले रचनाकार कोमल की कहानियाँ 'साहूकार की मछली' और 'पहचान' भी आदिवासी जीवन संघर्ष को रेखांकित करती है। गाँव के पास बहती नदी व बाँध का पानी आदिवासी की अपनी संपदा थी। वह जब चाहे अपनी जरूरत भर की थोड़ी-सी चीजें आसपास के जंगल, नदी व पर्वतों से लेकर अपना गुजर-बसर करता

था किंतु समय की धार ने उसके जीवन की धारा को बदल दियाप धीरे-धीरे इन प्राकृतिक संसाधनों पर सेठ-साहूकारों और सरकारों ने अपनी मोहर लगा दीप अब आदिवासी उन प्रकृति प्रदत्त चीजों की उपयोग के लिए स्वतंत्र नहीं रहाप कुछ ऐसी ही पीड़ा 'साहूकार की मछली' नामक कहानी में अभिव्यक्त हुई है।

बुधुवा की बीमार पत्नी जब अपने पति से मछली खाने की इच्छा व्यक्त करती है तो बुधुवा चिंता में पड़ जाता है और वह बताता है कि इस मौसम में मछली मिलना कठिन है और सिवाय बाँध के और कहीं मछली होगी ही नहींप बाँध से मछली लाना कितना कठिन है, हम जानते हैं। बाँध पर साहूकार का अधिकार है। वहाँ से मछली पकड़ना जान पर खेलने जैसा है। किंतु इस बात पर बुधुवा की पत्नी अपना विरोध दर्शाती है। कहती है- ''बाँध बंधवाई हय, इकर मतलब इ नाहीं कि नदी और मछली भी ऊकर बाप की हय''14

बुधुवा जैसे-जैसे बाँध के पहरेदार को पटाता है किंतु यह पटाना बहुत देर तक टिक नहीं पाता क्योंकि जैसे ही वह कुछ मछलियाँ पकड़ने में सफल होता है, साहूकार की आवाज उसके कान में पड़ती है। हाथ में बंदूक लिए साहूकार को देखने पर वह काँप उठता है। वह जल्दी से वहाँ से भाग उठता है और भागते-भागते उसके हाथ से मछलियाँ कहीं गिर जाती हैं और इतने संघर्ष के बाद भी वह खाली हाथ ही घर लौटता है। बीमार पत्नी मछली पकाने की तैयारी में मसाला बना रही होती है और वह उसे देखकर हतप्रभ रह जाता है। कहानी दर्शाती है कि आज जीवन की छोटी-छोटी जरूरतों के लिए भी व्यक्ति को बड़ा संघर्ष करना पड़ता है।

वहीं पहचान कहानी में रचनाकार ने आदिवासियों की पहचान व सरकारी अमले की कार्यप्रणाली को उजागर किया है। यह लघु कथा उस आदिवासी युवती की कथा है जो पढ़-लिख गई है, उसका नाम, वेशभूषा, भाषा कुछ भी वैसे नहीं है जो परंपरागत आदिवासी जीवन में दिखाई पड़ती है। जब वह अपना जाति प्रमाण पत्र बनवाने मुखिया के पास जाती हैं तो मुखिया को आश्चर्य होता है कि तुम्हारा नाम सोनिया टोपपो है और यह आदिवासियों जैसा नाम नहीं है। और तुम्हारे हाथ पर गोदना भी नहींप साथ ही तुम आदिवासियों जैसा मोटा कपड़ा भी नहीं पहनती आदि-आदिप यह सब मुखिया जी उसके अंगों को छू-छू कर बताते हैं। इस प्रकार यह लघु कथा आदिवासी पहचान वह तथाकथित उच्च वर्ग का आदिवासियों के प्रति व्यवहार आदि के विषय में बड़े-बड़े प्रश्न छोड़ देती है।

वाल्टर भेंगरा 'तरुण' ने 'खखरा' कहानी के माध्यम से ग्राम एवं आदिवासी जन के विकास की अवधारणा को स्पष्ट किया है। रचनाकार आदिवासी जनों को यह बताना चाहता है कि आज के आदिवासी युवाओं को पढ़-लिख कर आगे बढ़ना चाहिए और उन्हें केवल अपने जीवन या अपनी तरक्की तक सीमित न रहकर अपने गाँव के कल्याण के लिए अपनी प्रतिभा का उपयोग करना चाहिए. खखरा (जतरा) एक ऐसा ही पात्र है जो पढ़ाई के लिए गाँव से बाहर एवं विदेश तक जाता है। उसकी प्रतिभा के बल पर उसे कई ऑफर मिलते हैं किंतु वह उन सबको छोड़कर अपने गाँव आता है और उसके कल्याण के लिए प्रयास कर ग्रामोत्थान में लग जाता है। यहाँ तक कि उसके कार्यों को टीवी पर दिखाने के लिए वहाँ की टीम भी आती है। गाँव व शहर की तुलना करते हुए खखरा कहता है कि- ''सर क्योंकि उस कीचड़ में शहर की कीचड़ की तरह बदबू नहीं, खुशबू होती है। महानगर की कीचड़ में भयंकर कीड़े पैदा होते हैं। मगर गाँव की कीचड़ में धान की खेती होती है।

अनेक तरह की फसलें उपजती हैं। कमल के फूल खिलते हैं।''15

पीटर पाल एक्का आदिवासी कथा साहित्य लेखन की दिशा में चर्चित नाम है। एक्का की कहानी 'राजकुमारों के देश में' आदिवासी परंपरागत सुखी जीवन व बदलाव तथा विकास योजनाओं के बाद उनके जीवन में आए परिवर्तनों को सहजता से अभिव्यक्ति देती है। मंगलू काका, काकी और उनकी बेटी चंदा के बहाने कहानीकार ने दर्शा दिया की सहज जीवन जीने वाला आदिवासी हर समय मदद के लिए तैयार रहता है। अल्प सुविधाओं में खुशहाल रहता है। साँझ ढलते ही ढोल बजाना, माँदल की थाप पर बेफिक्र नाचना उसके जीवन का हिस्सा था धीरे धीरे गाँव बदले, आदिवासी के हाल बदलेप विकास के नाम पर ठगा गया और सरकारी मशीनरी ने उसके प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करना शुरु किया है- ''अब तो सब कुछ कितना बदल गया है। पहले वाला गाँव कहाँ रहा ? अब तो सरपंच, मुखिया, पटेल बाबू, पूरण पंडित का राज चले है। सरकारी योजना कहे है आदिवासियों के लिए, पर कहाँ कुछ होवै है ? सब पैसा तो वही जंगली मानुष निगल जाता है। थोड़ा-सा कहा-सुना नहीं, उनके लठैत मारे-पीटे लगे हैं।''16 जैसे-जैसे योजनाओं की हालत मोटी होती जाती है वैसे-वैसे मंगलू काका की हालत पतली होती जाती है। पेड़-पौधों से मिली जड़ी-बूटियों व पत्तों के रस से पीड़ित मानवता की मदद करने वाले काका को घर के बेल बेचने पर मजबूर होना पड़ता है। उनकी पुत्री चंदा को गाँव के ही लोगों की कुदृष्टि का शिकार होना पड़ता है। इसी कारण रचनाकार पूछना चाहता है कि- ''किन के पर आबाद हुए, देश समाज कितना आगे बढ़ा, कुछ कहा नहीं जा सकताप हाँ उस पर्वतीय इलाके में आदिवासियों के जो घर मिट्टी के थे, जहाँ मंगलू काका जैसा छोटा सुखी परिवार रहता था- अब न वह रह गया था और न ही प्रकृति-प्रांगण और न ढोलक-मांदर की वह डिमडिमाती आवाज, जो उस देश के राजकुमार बेफिक्री में, खुशी के पलों को उजागर करते उन्मुक्त बजाते थेप''17 इस प्रकार विकास की प्रक्रिया ने आदिवासी जीवन व संस्कृति को प्रभावित कर खोखला बना दियाप विकास की प्रक्रिया में उसने अपना पहनावा खानपान सब कुछ बदला किंतु वह न तो पूरी तरह आधुनिक हो पाया और न पूरी तरह अपनी संस्कृति से जुड़ा रह पायाप उसकी हालत अब दो पाटों के बीच फँसने जैसी हो गई.

इस प्रकार आदिवासी जीवन का अपना वैशिष्ट्य है। उनके संघर्ष को हिंदी कथाकारों ने विविध प्रकार से अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है। ''आदिवासी समाज का वैशिष्ट्य इस बात में है कि विपन्नता के बावजूद वह सुरुचि संपन्न है। वह स्यापा करने वाला समाज नहीं, वह श्रम और आनंद वाला समाज है। एक ऐसा समाज, जो लिपि और लिखित साहित्य नहीं रहने के बावजूद अपनी भाषा, संस्कृति और साहित्य को हजारों वर्षों के संघर्ष से बचाकर यहाँ तक पहुंचा है।''18

निवास:
ई-15, विश्वविद्यालय आवास, अशोक नगर,
उदयपुर
संपर्क: 98283 51618, 94627 51618

संदर्भ सूची –

1. शशि शेखर, सं. कादम्बिनी, जनवरी, 2017, न भूलने वाली कहानियाँ, आवरण कथा, पृष्ठ 09

2. डॉ. नवीन नंदवाना, संपादक, समवेत, अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका, जुलाई, 2014, हिमांशु पब्लिकेशंस, उदयपुर, भूमिका से।

3. प्रो. श्रवण कुमार मीणा, अर्थ सत्ता विमर्श और आदिवासी जीवन संदर्भ, आदिवासी समाज, संस्कृति और साहित्य, सं. डॉ. नवीन नंदवाना, हिमांशु पब्लिकेशंस, उदयपुर, 2016, पृष्ठ 179

4. वाल्टर भेंगरा 'तरुण', संगी, लोकप्रिय आदिवासी कहानियाँ, संपादक, वंदना टेटे, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृष्ठ 26

5. वाल्टर भेंगरा 'तरुण', संगी, लोकप्रिय आदिवासी कहानियाँ, संपादक, वंदना टेटे, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृष्ठ 31

6. मंगल सिंह मुंडा धोखा आदिवासी लोकप्रिय कहानियां संपादक वंदना टेटे, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृष्ठ 33

7. संजीव दुनिया की सबसे हसीन औरत, आदिवासी कहानियां, संपादक केदार प्रसाद मीणा, अलख प्रकाशन, जयपुर, 2013, पृष्ठ 36

8. संजीव दुनिया की सबसे हसीन औरत, आदिवासी कहानियां, संपादक केदार प्रसाद मीणा, अलख प्रकाशन, जयपुर, 2013, पृष्ठ 38

9. संजीव दुनिया की सबसे हसीन औरत, आदिवासी कहानियां, संपादक केदार प्रसाद मीणा, अलख प्रकाशन, जयपुर, 2013, पृष्ठ 40

10. हरिराम मीणा, सांवड़या, आदिवासी कहानियां, संपादक केदार प्रसाद मीणा, अलख प्रकाशन, जयपुर, 2013, पृष्ठ 32

11. एलिस एक्का, वन कन्या, एलिस एक्का की कहानियां, सं वंदना टेटे, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ 42-43

12. रोज केरकेट्टा, बिरुवार गमछा तथा अन्य कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृष्ठ 131

13. वंदना टेटे, संपादक : एलिस एक्का की कहानियां, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, फ्लैप से

14. कोमल, साहूकार की मछली, आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, सं. रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 146

15. वाल्टर भेंगरा 'तरुण', खखरा, आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, सं. रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 153

16. पीटर पॉल एक्का, 'राजकुमारों के देश में', आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, सं. रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 164

17. पीटर पॉल एक्का, 'राजकुमारों के देश में', आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, सं. रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 166

18. विनोद कुमार, जहां आप पहले कभी नहीं गए होंगे, बिरुवार गमछा तथा अन्य कहानियाँ, रोज केरकेट्टा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, भूमिका, पृष्ठ 18